रिपोर्ट करने योग्य

भारत के उच्चतम न्यायालय में

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार

2022 की आपराधिक अपील संख्या 195

(2020 की एसएलपी (सीआरएल) संख्या 6545 से उत्पन्न)

कहकशां कौसर @सोनम और अन्य अपीलकर्ता (गण)

बनाम

बिहार राज्य और अन्य उत्तरदाता (गण)

निर्णय

कृष्णा मुरारी, न्यायमूर्ति

अनुमति दी गई।

2. यह अपील आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत अपीलार्थियों द्वारा दायर 2019 की आपराधिक रिट याचिका संख्या 1492 में पटना उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 13.11.2019 को पारित फैसले और आदेश के खिलाफ निर्देशित है, जिसमें भारतीय दंड संहिता की धारा 341,323,379,354 और 498ए के तहत अपराधों के लिए अपीलार्थियों फँसाने वाली एफ.आई.आर. संख्या 248/2019 दिनांक 01.04.2019 को चुनौती देते हुए उच्च न्यायालय ने खारिज कर दिया।

तथ्यात्मक मैट्रिक्स

3. शिकायतकर्ता (इसमें प्रतिवादी संख्या 5) तरन्नुम अख्तर @सोनी का विवाह 18 सितंबर, 2017 को मोहम्मद इकराम से हुआ था।इसमें अपीलार्थी प्रत्यर्थी नं. ५ के ससुराल वाले हैं.11. 12. 17 को, उक्त प्रत्यर्थी ने शुरू में दहेज और उत्पीड़न की मांग का आरोप लगाते हुए उसके पति और अपीलकर्ताओं के खिलाफ मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, पूर्णिया की अदालत के समक्ष एक आपराधिक शिकायत संस्थित की।तत्पश्चात्, जब समन जारी करने के चरण में आदेश पारित करने के लिए फाइल पूर्णिया के अनुमंडल न्यायिक मजिस्ट्रेट न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की गई, मजिस्ट्रेट ने यह निष्कर्ष निकाला कि तात्विक साक्ष्य के परिशीलन पर ससुराल वालों के विरुद्ध प्रथम दृष्टया कोई मामला नहीं बनाया गया था और उनके विरुद्ध लगाए गए आरोप विशिष्ट प्रकृति के नहीं थे।हालांकि, उक्त अदालत

ने पति मोहम्मद इकराम के खिलाफ आईपीसी की धारा 498 ए, 323 के तहत अपराध के लिए संज्ञान लिया और समन जारी किया।इस विवाद को अंततः सुलझा लिया गया और इसमें प्रत्यर्थी नं. ५ वैवाहिक घर में वापस आया.

4. इसके बाद, इसमें 01.04.19 को, प्रत्यर्थी नं. 5 ने अपने पति मोहम्मद इकराम और इसमें अपीलार्थियों के खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 341, 323, 379, 354, और 498 ए के तहत एफआईआर दर्ज करने के लिए एक और लिखित शिकायत दी.शिकायत में अन्य बातों के साथ-साथ आरोप लगाया गया कि सभी आरोपी प्रतिवादी पत्नी पर दहेज के रूप में एक कार खरीदने के लिए दबाव डाल रहे थे और मांग पूरी न होने पर जबरन उसका गर्भपात करने की धमकी दे रहे थे।

5. व्यथित, पति और अपीलार्थी ने इसमें पटना उच्च न्यायालय के समक्ष उक्त एफ. आई. आर. दिनांक 01.04.19 को अभिखंडित करने के लिए एक आपराधिक रिट याचिका दायर की, जिसे आक्षेपित निर्णय द्वारा खारिज कर दिया गया था।उच्च न्यायालय ने पाया कि प्रथम दृष्टया प्राथमिकी में किए गए कथनों से अपराध का खुलासा होता है और इसलिए पुलिस द्वारा मामले की जांच किए जाने की आवश्यकता है।इसमें अपीलार्थी, भतीजी (प्रत्यर्थी नं. १), सास (प्रत्यर्थी नं. २), भाभी (प्रत्यर्थी नं. ३) और भाभी (प्रत्यर्थी नं. ४) होने के नाते, इस प्रकार वर्तमान विशेष अनुमति याचिका के माध्यम से इस न्यायालय में पहुंचे हैं.

<u>अपीलकर्ताओं द्वारा किए गए तर्क</u>

6. इसमें अपीलकर्ताओं के वकील का तर्क है कि पुलिस अधिकारी एफआईआर दर्ज करने से पहले प्रारंभिक जांच करने के लिए बाध्य था क्योंकि यह तत्काल मामला उन मामलों की श्रेणियों के भीतर आता है, जिन पर प्रारंभिक जांच की जा सकती है, जैसा कि ललिता कुमारी बनाम उत्तर प्रदेश सरकार और अन्य[1] मामले में इस न्यायालय द्वारा अधिदेश दिया गया है।

7. यह भी प्रस्तुत किया गया है कि वर्ष 2017 में पहले, प्रत्यर्थी पत्नी ने ऐसे आरोपों पर एक आपराधिक शिकायत संस्थित की थी, जिसके द्वारा न्यायिक मजिस्ट्रेट ने साक्ष्य पर विचार करने के बाद केवल पति के खिलाफ समन जारी किया था, और पाया कि इसमें अपीलार्थियों के खिलाफ लगाए गए आरोप सर्वव्यापी थे।इसके अलावा, यह प्रस्तुत किया जाता है कि एफआईआर केवल अपीलार्थी के ससुराल वालों प्रश्नगत करने के लिए प्रतिशोधात्मक इरादे से की गई है, और उसी के अनुसार उससे निपटा जाना चाहिए.मानवाधिकार के लिए सोशल एक्सन फोरम तथा अन्य बनाम्

1(2014) 2 एससीसी 1

भारत संघ, विधि और न्याय मंत्रालय तथा अन्य[2] के मामले में भरोसा जताया है जिसमें यह देखा गया है-

> "4. भारतीय दंड संहिता की धारा 498-क की संवैधानिकता के संबंध में सुशील कुमार शर्मा बनाम भारत संघ और अन्य, में उच्चतम न्यायालय द्वारा धारित है:-
>
> "दंड संहिता की धारा 498ए का प्रावधान असंवैधानिक और अधिकारातीत नहीं है। कानून के किसी प्रावधान के दुरूपयोग की संभावना से ही किसी कानून को अवैध नहीं ठहराया जा सकता।अतः यह अभिवाक कि धारा 498क का कोई विधिक या संवैधानिक आधार नहीं है, तर्कसंगत नहीं है।इन प्रावधानों का उद्देश्य दहेज के खतरे की रोकथाम करना है।लेकिन कई ऐसे उदाहरण सामने आए हैं जहां शिकायतें नेक इरादे से दर्ज नहीं की गई हैं।ऐसे मामलों में अभियुक्त को बरी करने से सभी मामलों में मुकदमे के दौरान और उससे पहले हुई बदनामी समाप्त नहीं हो जाती। कभी-कभी प्रतिकूल मीडिया कवरेज दु:ख को और बढ़ा देती है।अतः प्रश्न यह है कि नेक इरादे से किए गए प्रावधान के दुरुपयोग को रोकने के लिए क्या उपचारात्मक उपाय किए जा सकते हैं।केवल इसलिए कि यह प्रावधान संवैधानिक और अधिकारातीत नहीं है, बेईमान व्यक्तियों को व्यक्तिगत प्रतिशोध को तोड़ने या उत्पीड़न करने का लाइसेंस नहीं देता है। इसलिए, विधायिका के लिए यह पता लगाना आवश्यक हो सकता है कि तुच्छ शिकायतों या आरोपों के निर्माता कैसे हैं, से समुचित रूप से निपटा जा सकता है।तब तक न्यायालयों को मौजूदा ढांचे के भीतर स्थिति का ध्यान रखना होगा।"

<u>प्रतिवादी संख्या **1** बिहार राज्य द्वारा किया गया तर्क-</u>

8. यहां प्रत्यर्थी संख्या 1, अर्थात्, बिहार राज्य, प्रतिवाद करता है कि वर्तमान प्राथमिकी, दहेज के लिए प्रत्यर्थी पत्नी को परेशान न करने और उसके साथ उचित व्यवहार करने के लिए, पति मोहम्मद इकराम द्वारा विद्वान प्रधान न्यायाधीश पूर्णिया के समक्ष दिए गए आश्वासन के बाद, वर्ष 2019 में किए गए अपराधों से संबंधित है।हालांकि, पति और अपीलकर्ताओं ने, आश्वासन के बावजूद, दहेज की अपनी मांग जारी रखी है और प्रतिवादी पत्नी की गर्भावस्था को जबरन समाप्त करने की धमकी दी है.ये अधिनियम एक नए वाद हेतुक का गठन करते हैं और इसलिए यहां दिनांक 01.04.2019 प्रश्नगत एफआईआर अलग और स्वतंत्रता है, और इसे दिनांक 11.12.2017 की पिछली एफआईआर की पुनरावृत्ति के रूप में नहीं कहा जा सकता है।इसके अलावा, एफआईआर के अनुसार एक जांच की गई और सभी आरोपी व्यक्तियों के खिलाफ मामला सही पाया गया है, इसलिए ललिता कुमारी (सुप्रा) वर्तमान मामले में लागू नहीं होगी.

2(2018) 10 एससीसी 443

प्रतिवादी संख्या **5** द्वारा किए गए विवाद-शिकायतकर्ता पत्नी

9. प्रत्यर्थी नं. ५ का तर्क है कि कुल सात अभियुक्तों में से, प्रश्नगत एफ आई आर को उसके पति सहित केवल पाँच अभियुक्तों द्वारा चुनौती दी गई थी.यह तर्क दिया गया है कि अभियुक्त पति मोहम्मद इकराम @सिकंदर द्वारा आक्षेपित आदेश स्पष्ट रूप से स्वीकार किया गया है क्योंकि उसने आक्षेपित उच्च न्यायालय के फैसले को चुनौती नहीं दी है.इसके अलावा, जहां तक चार आरोपी अपीलकर्ता ससुराल वालों की भागीदारी का संबंध है, यह न केवल एफआईआर में दिए गए प्रकथनों से परिलक्षित होता है, बल्कि जांच अधिकारी द्वारा जांच के दौरान एकत्र किए गए मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य से भी इसकी पुष्टि होती है, जिसकी परिणति यहां चार अपीलकर्ताओं सहित सभी सात अभियुक्तों के खिलाफ आरोप पत्र दायर करने में होती है।प्राथमिकी में इस प्रकार लगाए गए आरोप प्रथम दृष्टया मामला बनाने के लिए पर्याप्त हैं और शिकायत दर्ज करने के समय 01.04.2019 को वर्ष 2017 के शिकायत मामले के लंबित होने का उल्लेख न करना अभियोजन के मामले के लिए घातक नहीं है।

10. यह आगे प्रस्तुत किया जाता है कि एफआईआर में किए गए आरोप गंभीर प्रकृति के हैं और दहेज की मांग को पूरा करने के लिए प्रत्यर्थी पत्नी को बार-बार शारीरिक और मानसिक रूप से प्रताड़ित किया गया है. इसके अलावा, भले ही इसमें प्रत्यर्थी नं. ५ द्वारा किए गए तर्क अपीलार्थी ससुराल वालों द्वारा विवादित हों, उनकी सत्यता का परीक्षण निचली अदालत के समक्ष परीक्षण किया जा सकता है.आगे यह प्रतिवाद किया गया है कि इस न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन शक्ति के प्रयोग के संबंध में एक सुसंगत दृष्टिकोण भी अपनाया है। राजेश बजाज बनाम राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली राज्य और अन्य[3] वाले मामले में, जिसमें न्यायालय ने स्पष्ट रूप से यह अभिनिर्धारित किया कि भले ही प्रथम दृष्टया अपराध के अवयवों को प्रकट करने वाला कोई मामला बनता है, न्यायालय को शिकायत को अभिखंडित नहीं करना चाहिए।इसलिए, आक्षेपित आदेश को किसी भी तरह से विकृत, गुप्त या त्रुटिपूर्ण नहीं कहा जा सकता है और इसलिए इस माननीय न्यायालय द्वारा किसी भी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

शामिल मुद्दा

11. हमारी सुविचारित राय में, अपीलकर्ताओं और प्रत्यर्थियों द्वारा किए गए प्रासंगिक तथ्यों और दलीलों का अध्ययन करने के बाद, सबसे महत्वपूर्ण मुद्दा जो वर्तमान मामले में निर्धारण की आवश्यकता है, यह है कि क्या ससुराल के अपीलकर्ताओं के खिलाफ लगाए गए आरोप सामान्य सर्वव्यापी आरोपों की प्रकृति के हैं और इसलिए उन्हें खारिज किया जा सकता है?

3(1999) 3 एससीसी 259

12. लगाए गए अभिकथनों की प्रकृति और अंतर्वस्तु पर अधिक विस्तार से विचार करने से पूर्व, यह उल्लेख करना उचित होगा कि भा. दं. सं. की धारा 498-क का निगमन किसी महिला के प्रति उसके पति और उसके ससुराल वालों द्वारा की गई क्रूरता को रोकने के लिए त्वरित राज्य हस्तक्षेप को तेजी से सुविधाजनक बनाने के उद्देश्य से किया गया था।तथापि, यह भी समान रूप से सत्य है कि हाल के दिनों में देश में वैवाहिक मुकदमेबाजी में भी काफी वृद्धि हुई है और विवाह की संस्था के इर्द-गिर्द अब पहले से कहीं अधिक असंतोष और टकराव हो रहे हैं।इसके परिणामस्वरूप पति और उसके संबंधियों के विरुद्ध व्यक्तिगत प्रतिफल तय करने के साधन के रूप में भा. दं. सं. के 498क जैसे उपबंधों का प्रयोग करने की प्रवृत्ति बढ़ गई है।

13. यह न्यायालय राजेश शर्मा और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश सरकार और अन्य[4] वाले मामले में अपने निर्णय में सहमत व्यक्त किया हैः-

> "14. धारा 498-क को कानून में पति या उसके रिश्तेदारों द्वारा किसी पत्नी के विरुद्ध क्रूरता को दंडित करने के प्रशंसनीय उद्देश्य के साथ जोड़ा गया था, विशेष रूप से जब ऐसी क्रूरता का परिणाम आत्महत्या या महिला की हत्या के रूप में आने की संभावना थी, जैसा कि 1983 के अधिनियम 46 के उद्देश्यों और कारणों के कथन में उल्लिखित है।धारा 498-क में 'क्रूरता' अभिव्यक्ति में ऐसा आचरण शामिल है जो महिला को आत्महत्या करने या गंभीर चोट (मानसिक या शारीरिक) का कारण बनने या उसे गैरकानूनी मांग को पूरा करने के लिए मजबूर करने की दृष्टि से जीवन या उत्पीड़न करने के लिए प्रेरित कर सकता है।यह गंभीर चिंता का विषय है कि बड़ी संख्या में मामले पहले से ही अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो के कुछ आंकड़ों के तहत दर्ज किए जा रहे हैं।इस न्यायालय ने पहले इस तथ्य पर गौर किया था कि इस तरह की अधिकांश शिकायतें छोटी-मोटी बातों पर समय-समय पर दर्ज की जाती हैं।ऐसी कई शिकायतें सही नहीं हैं।शिकायत दर्ज करते समय, निहितार्थ और परिणाम की कल्पना नहीं की जाती है।कई बार ऐसी शिकायतों से न केवल आरोपी को बल्कि शिकायतकर्ता को भी उत्पीड़न का सामना करना पड़ता है।अनावश्यक गिरफ्तारी समझौते के अवसरों को नष्ट कर सकती है।"

14. इससे पहले, अरनेश कुमार बनाम बिहार राज्य और एक अन्य[5] वाले मामले में यह भी मत व्यक्त किया गयाः-

---

4(2018) 10 एससीसी 472

5(2014) 8 एससीसी 2736. (2010) 7 एससीसी 667

"4. हाल के वर्षों में वैवाहिक विवादों में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है।विवाह की संस्था को इस देश में बहुत सम्मान दिया जाता है।आईपीसी की धारा 498-ए को पति और उसके रिश्तेदारों के हाथों महिला के उत्पीड़न के खतरे से निपटने के लिए पेश किया गया था।इस तथ्य ने कि भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए एक संज्ञेय और गैर-जमानती अपराध है, इसे उन प्रावधानों के बीच एक संदिग्ध गौरव का स्थान दिया है जिनका उपयोग असंतुष्ट पत्नियों द्वारा हथियार के रूप में किया जाता है।उत्पीड़न का सबसे सरल तरीका है कि इस प्रावधान के तहत पति और उसके रिश्तेदारों को गिरफ्तार किया जाए।कई मामलों में पति के दादा-दादी और विदेश में दशकों से रह रही उनकी बहनों को गिरफ्तार किया जाता है।"

15. इसके अतिरिक्त प्रीति गुप्ता और अन्य बनाम झारखंड राज्य और अन्य[6] वाले मामले में, यह भी देखा गया हैः-

"32. यह सामान्य अनुभव का विषय है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 498 क के अधीन इनमें से अधिकांश शिकायतें उचित विचार-विमर्श के बिना तुच्छ मुद्दों पर क्षण भर में दाखिल की जाती हैं।हमारे सामने बड़ी संख्या में ऐसी शिकायतें आती हैं जो नेक इरादे से दर्ज नहीं की जाती हैं।साथ ही, दहेज उत्पीड़न के वास्तविक मामलों की संख्या में तेजी से वृद्धि भी गंभीर चिंता का विषय है।

33. बार के विद्वान सदस्यों की यह सुनिश्चित करने के लिए भारी सामाजिक जिम्मेदारी और दायित्व है कि पारिवारिक जीवन के सामाजिक ताने-बाने को बर्बाद या ध्वस्त न किया जाए।उन्हें यह सुनिश्चित करना चाहिए कि छोटी घटनाओं के अतिरंजित कथन आपराधिक शिकायतों में प्रतिबिंबित न हों। अधिकांश शिकायतें या तो उनकी सलाह पर या उनके पास दर्ज कराई जाती हैं। बार के विद्वान सदस्यों, जो एक महान पेशे से संबंधित हैं, को अपनी महान परंपराओं को बनाए रखना चाहिए और धारा 498 ए के तहत प्रत्येक शिकायत को एक बुनियादी मानवीय समस्या के रूप में मानना चाहिए और उस मानवीय समस्या के सौहार्दपूर्ण समाधान पर पहुंचने में पक्षकारों की मदद करने के लिए गंभीर प्रयास करना चाहिए।उन्हें यह सुनिश्चित करने के लिए अपनी पूरी क्षमता से अपने कर्तव्यों का निर्वहन करना चाहिए कि समाज में सामाजिक ताने-बाने,

---

6(2010) 7 SCC 667

शांति और सौहार्द बना रहे।बार के सदस्यों को यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि एक शिकायत से कई मामले सामने न आएं।

34. दुर्भाग्य से, शिकायत दर्ज करने के समय शिकायतकर्ता द्वारा निहितार्थों और परिणामों की उचित रूप से कल्पना नहीं की जाती है कि ऐसी शिकायत शिकायतकर्ता, अभियुक्त और उसके निकट संबंधियों को अजेय उत्पीड़न, पीड़ा और दर्द का कारण बन सकती है।

35. न्याय का अंतिम उद्देश्य सत्य का पता लगाना और दोषी को दंडित करना और निर्दोष की रक्षा करना है।इन शिकायतों में से अधिकांश में सच्चाई का पता लगाना एक कठिन कार्य है।पति और उसके सभी निकट संबंधों को फंसाने की प्रवृत्ति भी असामान्य नहीं है।कभी-कभी, आपराधिक मुकदमे की समाप्ति के बाद भी, वास्तविक सच्चाई का पता लगाना मुश्किल होता है।न्यायालयों को इन शिकायतों से निपटने में अत्यधिक सावधान और सतर्क रहना चाहिए और वैवाहिक मामलों पर विचार करते समय व्यावहारिक वास्तविकताओं को ध्यान में रखना चाहिए। पति के करीबी रिश्तेदारों के उत्पीड़न के आरोप जो विभिन्न शहरों में रह रहे थे और कभी उस जगह पर नहीं गए या शायद ही कभी गए जहां शिकायतकर्ता रहता था, पूरी तरह से अलग तरह के थे।शिकायत के आरोपों की बड़ी सावधानी और सतर्कता से जांच करने की आवश्यकता है।

36. अनुभव से पता चलता है कि लंबे और लंबे समय तक चलने वाले आपराधिक मुकदमों से पक्षकारों के बीच संबंधों में विद्वेष, कटुता और कटुता पैदा होती है।यह भी आम जानकारी का विषय है कि शिकायतकर्ता द्वारा दायर किए गए मामलों में यदि पति या पति के रिश्तेदारों को कुछ दिनों के लिए भी जेल में रहना पड़ता है, तो यह सौहार्दपूर्ण समाधान की संभावनाओं को पूरी तरह से नष्ट कर देगा।पीड़ा की प्रक्रिया बहुत लंबी और दर्दनाक होती है।"

16. गीता मेहरोत्रा और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य[7] वाले मामले में यह मत व्यक्त किया गया थाः- -

"21. इस स्तर पर जी. वी. राव बनाम् एल.एच.वी. प्रसाद और अन्य मामले में दर्ज इस न्यायालय की एक उपयुक्त टिप्पणी पर ध्यान देना प्रासंगिक होगा।" (2000) 3 एस. सी. सी. 693 में रिपोर्ट किया गया) जिसमें एक वैवाहिक विवाद में भी, इस न्यायालय

7(2012) 10 एससीसी 7418. (2018) 14 एससीसी 452

ने निर्णय दिया था कि उच्च न्यायालय को एक वैवाहिक विवाद से उत्पन्न शिकायत को रद्द कर देना चाहिए था जिसमें वैवाहिक मुकदमे में परिवार के सभी सदस्यों को शामिल किया गया था जिसे रद्द कर दिया गया थाऔर अलग कर दिया गया था। जिससे हम पूरी तरह सहमत हैः-

"हाल के दिनों में वैवाहिक विवाद का एक विस्फोट हुआ है।"विवाह एक पवित्र समारोह है, जिसका मुख्य उद्देश्य युवा दंपति को जीवन में बसने और शांति से रहने में सक्षम बनाना है। लेकिन वैवाहिक झगड़े अचानक शुरू हो जाते हैं, जो अक्सर गंभीर रूप ले लेते हैं, जिसके परिणामस्वरूप जघन्य अपराध होते हैं, जिसमें परिवार के बुजुर्ग भी शामिल होते हैं, जिसके परिणामस्वरूप जो लोग सलाह दे सकते थे और सुलह कर सकते थे, वे आपराधिक मामले में अभियुक्त के रूप में शामिल होने में असहाय हो जाते हैं। वैवाहिक मुकदमेबाजी को प्रोत्साहित न करने के लिए यहां कई कारणों का उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं है ताकि पक्षकार अपनी गलतियों पर विचार कर सकें और आपसी सहमति से विवादों को सौहार्दपूर्ण ढंग से समाप्त कर सकें, बजाय इसके कि इसे अदालत में लड़ा जाए जहां इसे समाप्त करने में वर्षों लग जाते हैं और इस प्रक्रिया में विभिन्न न्यायालयों में अपने मामलों का पीछा करने में पक्षकार अपने कम उम्र के दिनों को गंवा देते हैं। इस मामले में न्यायाधीशों का मानना था कि अदालतें इस तरह के विवादों को प्रोत्साहित नहीं करेंगी।"

17. हाल ही में के. सुब्बा राव बनाम तेलंगाना राज्य वाले मामले में भी ऐसा देखा गयाः-

> “6. विवाह संबंधी विवादों और दहेज-मृत्यु से संबंधित अपराधों में दूर के संबंधियों के विरुद्ध कार्यवाही करते समय न्यायालयों को सावधान रहना चाहिए। पति के संबंधियों को सभी आरोपों के आधार पर तब तक शामिल नहीं किया जाना चाहिए जब तक कि अपराध में उनकी संलिप्तता के विशिष्ट उदाहरण न दिए जाएं।"

18. उपर्युक्त निर्णय स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करते हैं कि इस न्यायालय ने शिकायतकर्ता के साथ-साथ अभियुक्त पर विचारण के दीर्घकालिक प्रभावों का विश्लेषण किए बिना, भारतीय दंड संहिता की धारा 498-क के दुरुपयोग और पति के संबंधियों को वैवाहिक विवादों में फंसाने की बढ़ती प्रवृत्ति पर चिंता व्यक्त की है।यह उक्त निर्णयों से आगे स्पष्ट है कि वैवाहिक विवाद के दौरान किए गए सामान्य सर्वव्यापी अभिकथनों के रूप में झूठे निहितार्थ, यदि अनियंत्रित छोड़ दिया जाए तो विधि की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा।इसलिए, इस अदालत ने अपने फैसलों के माध्यम से अदालतों को पति के

रिश्तेदारों और ससुराल वालों के खिलाफ कार्रवाई करने से आगाह किया है, जब उनके खिलाफ कोई प्रथम दृष्टया मामला नहीं बनता है।

19. इस मामले के तथ्यों पर आते हुए, दिनांक 01.04.19 की एफआईआर की सामग्री के अवलोकन पर, यह पता चला है कि अपीलार्थियों के खिलाफ सामान्य आरोप लगाए गए हैं। शिकायतकर्ता ने आरोप लगाया कि सभी आरोपियों ने उसे मानसिक रूप से प्रताड़ित किया और उसकी गर्भावस्था को समाप्त करने की धमकी दी।इसके अलावा, उनके खिलाफ कोई विशिष्ट और स्पष्ट आरोप नहीं लगाए गए हैं. इनमें से किसी भी अपीलकर्ता को, अर्थात्, उनके खिलाफ लगाए गए सामान्य आरोपों को आगे बढ़ाने में किसी भी अपीलकर्ता को कोई विशिष्ट भूमिका नहीं दी गई है.इससे ऐसी स्थिति उत्पन्न होती है जिसमें अपराध को आगे बढ़ाने में प्रत्येक अभियुक्त द्वारा निभाई गई भूमिका का पता लगाने में विफल रहता है।इसलिए आरोप सामान्य और सर्वव्यापी हैं और कहा जा सकता है कि यह छोटी-छोटी झड़पों के कारण लगाए गए हैं।जहां तक पति का संबंध है, चूंकि उन्होंने उच्च न्यायालय के आदेश के खिलाफ अपील नहीं की है, इसलिए हमने उनके खिलाफ लगाए गए आरोपों की सत्यता की जांच नहीं की है।हालांकि, जहां तक अपीलकर्ताओं का संबंध है, उनके खिलाफ लगाए गए आरोप सामान्य और सर्वव्यापी होने के कारण अभियोजन की आवश्यकता नहीं है.

20. इसके अलावा, एक पिछली प्राथमिकी में किए गए दहेज के रूप में उत्पीड़न और कार की मांग के समान आरोपों के बारे में. प्रत्यर्थी संख्या 1, अर्थात्, बिहार राज्य, का तर्क है कि वर्तमान प्राथमिकी वर्ष 2019 में किए गए अपराधों से संबंधित थी, जो पति मोहम्मद इकराम द्वारा वरिष्ठ न्यायाधीश पूर्णिया के समक्ष दिए गए आश्वासन के बाद की गई थी, ताकि प्रतिवादी पत्नी को दहेज के लिए परेशान न किया जा सके और उसके साथ उचित व्यवहार किया जा सके।हालांकि, आश्वासन के बावजूद, सभी आरोपियों ने अपनी मांगों और उत्पीड़न को जारी रखा।इस प्रकार यह प्रतिवाद किया जाता है कि ये कार्य एक नए वाद हेतुक का गठन करते हैं और इसलिए यहां दिनांक 01.04.2019 प्रश्नगत प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में, अलग-अलग और स्वतंत्रता हैं और इसे 11.12.17 को दर्ज की गई पहली एफआईआर की पुनरावृत्ति नहीं कहा जा सकता है।

21. यहां यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि यद्यपि दो एफआईआर अलग-अलग लेन-देन के आधार पर दो स्वतंत्रता उदाहरणों का गठन कर सकती हैं, वर्तमान शिकायत प्रत्यर्थी पत्नी के ससुराल वालों के खिलाफ विशिष्ट आरोप साबित करने में विफल रही है।ससुराल पक्ष के अपीलकर्ताओं के खिलाफ स्पष्ट आरोपों के अभाव में अभियोजन की अनुमति देने से कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा।

22. इसलिए, प्रासंगिक परिस्थितियों पर विचार करने पर और अभियुक्त अपीलकर्ताओं को जिम्मेदार किसी विशिष्ट भूमिका के अभाव में, यह अनुचित होगा यदि अपीलकर्ताओं को एक परीक्षण की पीड़ा से गुजरने के लिए मजबूर किया जाता है, अर्थात्, सामान्य और सर्वव्यापी आरोप ऐसी स्थिति में

प्रकट नहीं हो सकते हैं जहां शिकायतकर्ता के पति के रिश्तेदारों को परीक्षण के लिए मजबूर किया जाता है।इस न्यायालय द्वारा विभिन्न उदाहरणों में यह रेखांकित किया गया है कि एक आपराधिक मुकदमा जिसके परिणामस्वरूप अंततः दोषमुक्ति होती है, अभियुक्त पर गंभीर निशान भी डालता है, और इसलिए इस तरह के अभ्यास को हतोत्साहित किया जाना चाहिए।

23. उपरोक्त तथ्यों और चर्चाओं को ध्यान में रखते हुए, पटना उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 13.11.2019 को पारित आदेश को रद्द कर दिया गया है। भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 341, 323, 379, 354 और 498ए के तहत अपीलकर्ताओं के खिलाफ 2019 की एफ. आई. आर. संख्या 248 को रद्द कर दिया गया है।

24. इसके परिणामस्वरूप अपील करने की अनुमति दी जाती है।

(एस अब्दुल नजीर, न्यायमूर्ति)

(कृष्ण मुरारी, न्यायमूर्ति)

नई दिल्ली

08 फरवरी, 2022